दिल्ली उच्च न्यायालय नई दिल्ली

सुरक्षित: 22 फरवरी, 2024
उद्घोषित: 2 मार्च, 2024

सि.वा. (मू.प.) 448/2016

श्रीमती रेखा मांगलिक व अन्य ....वादीगण

द्वारा: सुश्री प्रियंका गोस्वामी, वा-2 की ओर से अधिवक्ता।

बनाम

श्री विनय कुमार गर्ग व अन्य .....प्रतिवादीगण

द्वारा: श्री अरविंद भट्ट, सुश्री रितिका चौबे व सुश्री स्वस्तिका सिंह, व्यक्तिगत रूप से प्र-1 सह प्र-1 की ओर से अधिवक्तागण।

कोरमः
माननीय न्यायमूर्ति सुश्री नीना बंसल कृष्णा

निर्णय

नीना बंसल कृष्णा, न्या.

<u>अंतर.आ. 10007/2023 (निर्देश हेतु प्र-1-सह-प्रति दावेदार द्वारा सि.प्र.सं., 1908 की धारा 151 के तहत)</u>

1. सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (एतद्पश्चात् "सि.प्र.सं.". के रूप में संदर्भित) की धारा 151 के तहत आवेदन आवेदक/प्रतिवादी सं. 1-सह-प्रति दावेदार की ओर से दायर किया गया है, जिसमें प्रारंभिक डिक्री दिनांक 18.10.2019 में संशोधन की मांग की गई है।

2. **आवेदन में यह प्रस्तुत किया गया है** कि दिनांक 12.08.2016 को पक्षकारों के पिता श्री रवि चंद गर्ग के निधन के परिणामस्वरूप, स्वर्गीय श्री रवि चंद गर्ग व अन्य सह-स्वामियों के विधिक वारिसों के बीच विभाजन हेतु वर्तमान वाद दायर किया गया था। पक्षकार दिनांक 10.10.2019 को दिल्ली उच्च न्यायालय मध्यस्थता एवं सुलह केंद्र में समझौते पर पहुंचे एवं उक्त समझौते के आधार पर, दिनांक 18.10.2019 को एक प्रारंभिक डिक्री एवं एक अंतिम डिक्री बनाई गई।

3. अब, वर्ष 2023 में, वर्तमान आवेदन दायर किया गया है जिसमें यह प्रस्तुत किया गया है कि श्रीमती कौशल्या गर्ग, मूल प्रतिवादी सं.2 की मृत्यु दिनांक 23.04.2021 को तथा श्री सुशील गर्ग, प्रतिवादी सं.5 की मृत्यु दिनांक 04.05.2021 को हो गई है। दोनों मृतक अपनी संपत्तियां छोड़ गए हैं जो उनके विधिक वारिसों को न्यागत हो गई हैं। दो प्रतिवादीगण के निधन के कारण, पक्षकारों को अंतिम डिक्री के निष्पादन एवं संपत्तियों की बिक्री में कठिनाई का

सामना करना पड़ रहा है क्योंकि संभावित खरीदारों द्वारा दो मृतक प्रतिवादीगण के विधिक वारिसों की वाद संपत्तियों के अधिकार के बारे में चिंताएं जताई जा रही हैं जो वाद संपत्तियों के वास्तविक मूल्य को पाने में बाधा उत्पन्न कर रही हैं।

4. यह भी कहा गया है कि चूंकि अंतिम डिक्री को अभी गैर-न्यायिक स्टाम्प पेपर पर अंकित किया जाना है, इसलिए प्रारंभिक एवं अंतिम डिक्री को पुनः तैयार किया जा सकता है तथा मूल प्रतिवादी सं. 2 श्रीमती कौशल्या गर्ग एवं प्रतिवादी सं. 5 श्री सुशील गर्ग के विधिक वारिसों को मूल प्रारंभिक डिक्री में ही प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

5. **प्रतिवादी सं.1**/न्यायिक ऋणी सं. 1/प्रति-दावेदार **की ओर से विद्वान अधिवक्ता** ने *सैयद मोहिद्दीन एवं अन्य बनाम अब्दुल रहीम एवं अन्य,* एआईआर 1964 एपी 260; *सुरजदेव दुबे एवं अन्य बनाम कृपा नारायण तिवारी*, एआईआर 1969 पीएटी 284; *एस. नारायण रेड्डी एवं अन्य बनाम एस. साई रेड्डी*, 1990 एससीसी ऑनलाइन एपी 12; *धर्मराज वेल्लालर बनाम रामचंद्र वेल्लालर एवं अन्य*, एमएएनयू/त.ना./0397/1992 पर भरोसा जताया है; जिसमें यह देखा गया कि अंतिम डिक्री अपेक्षित स्टाम्प पेपर पर लिखे जाने पर ही निष्पादन योग्य बनती है।

6. प्रस्तुतियाँ सुनी गईं।

7. वर्तमान विवाद यह है कि क्या अंतिम डिक्री के पक्षकारों के विधिक वारिसों को कुछ पक्षकारों की मृत्यु के कारण प्रारंभिक डिक्री में परिभाषित शेयर में परिवर्तन के कारण अंतिम डिक्री में परिवर्तन की अनुमति दी जा सकती है; विशेष रूप से तब जब अंतिम डिक्री को अपेक्षित स्टाम्प पेपर पर अभी तक अंकित नहीं किया गया है।

8. *यशवंत देवराव देशमुख बनाम वालचंद रामचंद कोठारी*, 1950 एससीसी 766 में यह अभिनिर्धारित किया गया कि न्यायालय शुल्क का भुगतान, अर्थात् देय राशि का भुगतान, पूरी तरह से डिक्री-धारक के अधिकार में है और उसे तत्काल भुगतान करने से कोई नहीं रोक सकता; डिक्री उसी तिथि से निष्पादित होने योग्य होती है जिस तिथि को वह पारित की गई थी।

9. *हमीद जोहरन बनाम अब्दुल सलाम*, एआईआर 2001 एससी 3404 के मामले में, भारतीय स्टाम्प अधिनियम की धारा 35 के तहत वर्जन पर विचार करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि निर्धारित अवधि को तब तक निलंबित नहीं रहने दिया जाएगा, जब तक कि स्टाम्प पेपर प्रस्तुत नहीं किया जाता है तथा विभाजन का आदेश उस पर तैयार नहीं हो जाता है एवं उसके बाद न्यायाधीश द्वारा हस्ताक्षर नहीं किए जाते हैं। उच्चतम न्यायालय ने डिक्री की 'निष्पादन योग्यता' और 'प्रवर्तनीयता' के बीच अंतर किया। 'निष्पादन' शब्द का अर्थ न्यायालय के निर्णय को लागू करने या प्रभावी करने की प्रक्रिया माना जाये तथा यह तब पूरा होता है जब डिक्री-धारक को निर्णय द्वारा दी गई

धनराशि या राहत मिल जाती है। हालांकि डिक्री पर स्टाम्प शुल्क का भुगतान न करने या कम भुगतान करने के कारण डिक्री को साक्ष्य के रूप में प्राप्त नहीं किया जा सकता है या निष्पादन में लागू नहीं किया जा सकता है, लेकिन सीमा की अवधि को वादी की इच्छा एवं दया पर निलंबित नहीं कहा जा सकता है। परिसीमा अवधि अंतिम डिक्री की तिथि से शुरू होती है एवं इसे किसी व्यक्ति के कहने पर तब तक प्रयोग करने से नहीं रोका जा सकता जब तक कि उसे सशर्त होने की वैधानिक मंजूरी न मिल जाए।

10. सर्वोच्च न्यायालय ने *वि.प्र. के माध्यम से चिरंजी लाल बनाम वि.प्र. के माध्यम से हरि दास* (2005) 10 एससीसी 746 के मामले में इसी पहलू पर विचार किया। यह स्पष्ट किया गया कि विभाजन हेतु वाद में एक डिक्री एक अचल संपत्ति में पक्षकारों के अधिकार की घोषणा करती है तथा शेयर के माप एवं सीमांकन करके विभाजित करती है। विभाजन हेतु एक मुकदमे में इस तरह के एक डिक्री को स्टाम्प अधिनियम के तहत स्टाम्प शुल्क के भुगतान हेतु उत्तरदायी लिखत माना जाता है। स्टाम्प अधिनियम का उद्देश्य राज्य हेतु राजस्व को सुरक्षित करना है तथा अधिनियम की योजना यह प्रदान करती है कि विभाजन के डिक्री को विधिवत स्टाम्प नहीं किया जा सकता है तथा एक बार, जुर्माने के साथ अपेक्षित स्टाम्प शुल्क का भुगतान किया जाता है, यदि कोई हो, तो डिक्री पर कार्रवाई की जा सकती है।

11. *चिरंजी लाल* (पूर्वोक्त) में यह भी देखा गया कि विभाजन के लिए एक मुकदमे में अंतिम डिक्री का लेखन होगा, डिक्री की तिथि से संबंधित होगा। स्टाम्प पेपर प्रस्तुत करने की तिथि पक्षकार के अधिकार एवं नियंत्रण पर निर्भर तथा उसके अधीन है। सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 या सीमा अधिनियम, स्टाम्प पेपर प्रस्तुत करने हेतु कोई अवधि या समय-सीमा प्रदान नहीं करता है। प्रासंगिक रूप से, विभाजन हेतु वाद में अंतिम डिक्री के लेखन पर, यह डिक्री की तिथि से संबंधित है। इसलिए, स्टाम्प पेपर प्रस्तुत न करने के अपने स्वयं के कार्य से, कोई पक्षकार सीमा की अवधि को चलने से नहीं रोक सकता है। 12 वर्ष की अवधि के भीतर डिक्री के निष्पादन की सीमा, अंतिम डिक्री के बनते ही शुरू हो जाती है तथा अपेक्षित स्टाम्प पेपर प्रदान करने में विफल रहने के कारण किसी भी पक्षकार द्वारा उल्लंघन के कारण इसे निलंबित नहीं किया जा सकता है। न ही सीमा की अवधि को तब तक निलंबित किया जा सकता है, जब तक कि स्टाम्प पेपर प्रस्तुत न किया जाए और उस पर डिक्री अंकित न हो जाए।

12. *वि.प्र. के माध्यम से शंकर बलवंत लोखंडे (मृत) बनाम चंद्रकांत शंकर लोखंडे* (1995) 3 एससीसी 413 तथा *पश्चिम बंगाल आवश्यक वस्तु आपूर्ति निगम बनाम स्वदेश एग्रो फार्मिंग एंड स्टोरेज प्राइवेट लिमिटेड व अन्य* (1999) 8 एससीसी 315 के पिछले निर्णयों का संदर्भ दिया गया, जिसमें कहा गया कि भले ही न्यायालय द्वारा डिक्री को शामिल करने के उद्देश्य से किसी विशेष तिथि

तक स्टाम्प पेपर प्रस्तुत करने का निर्देश दिया गया हो, लेकिन सीमा अवधि उस तिथि से शुरू होती है जब डिक्री पारित की जाती है, न कि उस तिथि से जब पक्षकारों द्वारा दिए गए स्टाम्प पेपर पर डिक्री को शामिल किया जाता है। सीमा अधिनियम के अनुच्छेद 136 के तहत स्वीकृत विधायी अधिदेश को तब तक स्थगित नहीं रखा जा सकता जब तक कि उक्त विधि में इसका प्रावधान न किया जाए।

13. *चिरंजी लाल* (पूर्वोक्त), में आगे यह भी कहा गया कि भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 एक राजकोषीय उपाय है जिसका उद्देश्य राज्य हेतु कुछ निश्चित प्रकार के लिखतों पर राजस्व सुरक्षित करना है। यह किसी मुकदमेबाज को उसके प्रतिद्वंद्वी के मामले का सामना करने हेतु तकनीकी हथियार से लैस करने के लिए अधिनियमित नहीं किया गया है।

14. भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1899 की धारा 2(15) में "विभाजन की लिखत" को किसी भी लिखत के रूप में परिभाषित किया गया है जिसके द्वारा किसी भी संपत्ति के सह-स्वामी ऐसी संपत्ति को अलग-अलग हिस्सों में विभाजित करते हैं या विभाजित करने हेतु सहमत होते हैं, और इसमें विभाजन को प्रभावित करने हेतु किसी भी सिविल न्यायालय/मध्यस्थ द्वारा पारित अंतिम आदेश भी शामिल है, जिसमें विभाजन का निर्देश दिया गया है। भारतीय स्टाम्प अधिनियम, 1989 की अनुसूची I के अनुच्छेद 45 में विभाजन की लिखत के मामले में देय उचित स्टाम्प शुल्क निर्धारित किया गया है। भारतीय

स्टाम्प अधिनियम, 1989 की धारा 33 में बिना विधिवत स्टाम्प वाली लिखत को जब्त करने एवं यह पता लगाने हेतु लिखत की जांच करने का प्रावधान है कि क्या लिखत पर उचित स्टाम्प लगा है। धारा 35 में प्रावधान है कि शुल्क से प्रभार्य कोई भी लिखत किसी भी उद्देश्य हेतु किसी भी व्यक्ति द्वारा साक्ष्य में स्वीकार नहीं की जाएगी, जिसके पास विधिक या पक्षकारों की सहमति से, साक्ष्य प्राप्त करने का अधिकार है या उस पर कार्रवाई की जाएगी, पंजीकृत या प्रमाणित किया जाएगा, जब तक कि ऐसे लिखत पर विधिवत स्टाम्प न लगा हो। धारा 40(ख) बिना विधिवत स्टाम्प वाले लिखत को जब्त करने का प्रावधान करती है।

15. *अर्जुन सोमदत्त बनाम विवान सोमदत्त*, ईएफए (मू.प.) सं. 1/19, इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा दिनांक 17.11.2022 को तय किए गए, में यह अभिनिर्धारित किया गया कि स्टाम्प ड्यूटी का मुद्दा स्टाम्प ड्यूटी के भुगतान हेतु बिक्री आय पर पहला शुल्क बनाने का निर्देश देकर डिक्री के प्रवर्तन में बाधा नहीं बन सकता है। इस तरह से राज्य के हित सुरक्षित रहेंगे तथा बिक्री आय का डिक्री धारक के बीच बंटवारा एवं अधिकारों का हस्तांतरण उसके बाद ही किया जाएगा।

16. *सुमन सपरा बनाम रोजी डबास व अन्य* (2023 एससीसी ऑनलाइन दिल्ली 1843) में इस न्यायालय की समन्वय न्यायपीठ ने पूर्वोक्त निर्णयों का संदर्भ दिया और कहा कि डिक्री निर्णय पारित होने की तिथि से निष्पादन योग्य हो

जाती है, न कि उस तिथि से जब इसे अपेक्षित स्टाम्प पेपर पर अंकित किया जाता है।

17. विभाजन हेतु किसी वाद में, वाद के पक्षकारों के हिस्से न्यायालय द्वारा प्रारंभिक डिक्री पारित करके घोषित किए जाते हैं तथा संपत्ति के विशिष्ट हिस्से को विभिन्न स्वामियों को आवंटित करने का काम अंतिम डिक्री के माध्यम से किया जाता है। इस प्रकार, यदि किसी विधिक वारिस की मृत्यु प्रारंभिक डिक्री पारित होने के बाद, लेकिन अंतिम डिक्री से पहले हो जाती है, तो न्यायालय अभी भी मामले के विचाराधीन है??? तथा मृत्यु द्वारा लाए गए परिवर्तन के आधार पर दूसरी प्रारंभिक डिक्री पारित कर सकता है। ***हालाँकि, यह अंतहीन रूप से नहीं चल सकता है तथा मृत्यु के आधार पर पक्षकारों के शेयर में परिवर्तन करने की न्यायालय की शक्ति अंतिम डिक्री पारित होने के साथ समाप्त हो जाएगी। इसके बाद, न्यायालय के पास डिक्री को संशोधित करने की कोई शक्ति नहीं है तथा निष्पादन न्यायालय अंतिम निर्णय के दिन तक डिक्री को निष्पादित करने हेतु बाध्य है।***

18. विभाजन के वाद में डिक्री, अचल संपत्तियों में पक्षकारों के अधिकारों की घोषणा करती है तथा शेयर को माप एवं सीमांकन के आधार पर विभाजित करती है। चूंकि डिक्री अचल संपत्तियों में पक्षकारों के अधिकारों एवं दायित्वों का निर्माण करती है, इसलिए इसे भारतीय स्टाम्प अधिनियम के तहत स्टाम्प शुल्क के भुगतान के लिए उत्तरदायी साधन माना जाता है तथा यदि इसे

निष्पादन के लिए प्रस्तुत किया जाता है, तो इसे अनिवार्य रूप से जब्त किया जाना चाहिए। केवल, अपेक्षित न्यायालय शुल्क एवं स्टाम्प शुल्क के साथ-साथ दंड का भुगतान करने पर, इसे निष्पादित/कार्रवाई की जा सकती है।

19. उच्चतम न्यायालय ने *फूलचंद व अन्य बनाम गोपाल लाल*, एआईआर 1967 एससी 1470 में विभाजन वाद की विशिष्ट प्रकृति को पहचानते हुए कहा कि यदि प्रारंभिक डिक्री पारित होने के बाद कोई घटना घटती है तथा शेयर में बदलाव की आवश्यकता होती है, तो न्यायालय ऐसा कर सकता है और उसे ऐसा करना चाहिए तथा यदि उस संबंध में कोई विवाद है, तो उस विवाद का निर्णय करने वाले न्यायालय के आदेश और पहले से पारित प्रारंभिक डिक्री में निर्दिष्ट शेयर में परिवर्तन करना अपने आप में एक डिक्री होगी जो अपील के लिए उत्तरदायी होगी। यह स्पष्ट किया गया कि ऐसा परिवर्तन केवल तब तक किया जा सकता है जब तक कि अंतिम डिक्री पारित नहीं हो जाती। इसलिए, किसी भी पक्षकार की मृत्यु के कारण लाए गए परिवर्तन, जो शेयर में परिवर्तन लाते हैं, अंतिम डिक्री पारित होने तक विचार किए जा सकते हैं, जिसके बाद यह शक्ति समाप्त हो जाती है।

20. निष्पादन न्यायालय अंतिम डिक्री के पीछे नहीं जा सकता है। निष्पादन न्यायालय अंतिम डिक्री पारित होने के बाद हुई मृत्यु के कारण डिक्री को अस्वीकार करने या निष्पादित करने या संबंधित पक्षकारों के शेयर को संशोधित करने हेतु सक्षम नहीं होगा।

21. *गोष्ठा बिहारी घोष बनाम अनिल कुमार सरकार व अन्य*, 1980 एससीसी ऑनलाइन कैल 21 के मामले में, इस पहलू पर विचार करते हुए, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि निष्पादन न्यायालय के लिए यह सक्षम नहीं होगा कि वह डिक्री पारित करने से इंकार कर दे या डिक्री पारित होने के बाद हुई मृत्यु के कारण संबंधित पक्षकारों के शेयर में परिवर्तन के आधार पर उसे संशोधित कर दे।

22. *शिवरामैया बनाम मल्लिकार्जुनैया*, 1977 एससीसी ऑनलाइन कार 215 के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि यदि सिविल न्यायालय द्वारा विभाजन की प्रक्रिया पूर्ण होने के बाद किसी भी पक्षकार की मृत्यु के परिणामस्वरूप शेयर में बदलाव होता है, जिसने सि.प्र.सं. के आदेश 20 नियम 18 के तहत डिक्री जारी की है, तो उसी कार्यवाही में पक्षकारों के शेयर के समायोजन के उद्देश्य से उसी न्यायालय का दरवाजा नहीं खटखटाया जा सकता है। ऐसे मामले में, पक्षकारों को पृथक वाद में राहत मांगनी पड़ सकती है, जैसा कि *फूलचंद व अन्य बनाम गोपाल लाल (पूर्वोक्त)* और *परशुराम राजाराम तिवारी बनाम हीरा बट राजाराम तिवारी*, एआईआर 1957 बॉम 59 के मामले में भी अभिनिर्धारित किया गया है।

23. वर्तमान मामले के तथ्यों पर आते हुए, अंतिम डिक्री निस्संदेह दिनांक 18.10.2019 को पारित की गई थी, जिसका अर्थ है कि दिनांक 18.10.2019 को एक निष्पादन योग्य अंतिम डिक्री बनाई गई थी। केवल इसलिए कि इसे

अपेक्षित गैर-न्यायिक स्टांप पेपर पर अंकित किया जाना बाकी है, यह दावा नहीं किया जा सकता है कि न्यायालय द्वारा इसपर आगे कुछ किया जाना है। अनिवार्य रूप से, यह एक मंत्रिस्तरीय कार्य है जो पक्षकारों द्वारा अपेक्षित स्टांप पेपर प्रदान करने पर किया जाना है तथा न्यायालय के समक्ष आगे कोई भी रास्ता नहीं है। अंतिम डिक्री को शामिल न करने से यह निष्पादन योग्य नहीं हो जाता है, लेकिन जब तक यह अपेक्षित स्टांप पेपर पर अंकित नहीं हो जाता है, तब तक यह लागू नहीं होगा। विधि के अवलोकन में, जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, यह आवश्यक रूप से माना जाना चाहिए कि अंतिम डिक्री पारित होने के बाद, न्यायालय कुछ पक्षकारों की मृत्यु के कारण बाद की घटनाओं या शेयर में परिवर्तन का संज्ञान नहीं ले सकता है।

24. इस संबंध में, ***सि.प्र.सं. के आदेश XXII नियम 6*** का उल्लेख करना उचित होगा, जो निम्नानुसार है:

" *आदेश* XXII -

> 6. *सुनवाई के पश्चात् मृत्यु के कारण कोई दुष्प्रेरण नहीं होगा - पूर्वगामी नियमों में किसी बात के होते हुए भी, चाहे वाद हेतुक कायम रहे या न रहे, सुनवाई की समाप्ति एवं निर्णय सुनाए जाने के बीच किसी भी पक्षकार की मृत्यु के कारण कोई दुष्प्रेरण नहीं होगा, किन्तु ऐसे मामले में निर्णय मृत्यु होने के बावजूद उद्घोषित किया जा सकेगा तथा उसका वही बल एवं प्रभाव होगा, मानो वह मृत्यु होने से पूर्व उद्घोषित किया गया हो।*"

25. इस प्रावधान से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि अंतिम बहस पूरी हो जाने के बाद किसी पक्षकार के विधिक वारिसों को पक्षकार नहीं बनाया जा सकता है तथा किसी पक्षकार की मृत्यु के बावजूद, अंतिम निर्णय अभी भी मृतक पक्षकार के नाम पर सुनाया जाएगा। इसका तात्पर्य यह है कि अंतिम बहस पूरी हो जाने के बाद मामले की सुनवाई समाप्त हो जाती है तथा किसी भी पक्षकार द्वारा करने के लिये और कुछ नहीं बचता है, सिवाय इसके कि न्यायालय को अभिवचनों एवं निर्णय के आधार पर अंतिम निर्णय देना है। इसलिए, नियम में ही यह प्रावधान है कि अंतिम सुनवाई पूरी हो जाने के बाद किसी भी पक्षकार की मृत्यु पर कोई वाद समाप्त नहीं होगा। सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 स्वयं ऐसी स्थितियों पर विचार करती है, जहां किसी भी पक्षकार की मृत्यु के कारण मृतक पक्षकार के विधिक वारिसों को पक्षकार बनाना आवश्यक नहीं होगा, भले ही निर्णय अभी सुनाया जाना बाकी हो। जिन मामलों में अंतिम डिक्री पारित हो चुकी है, उनमें न्यायालय द्वारा भी कुछ नहीं किया जा सकता है, तथा इसलिए प्रतिवादी/आवेदक का यह तर्क कि कार्यवाही तब तक समाप्त नहीं होती है, जब तक कि अंतिम डिक्री अपेक्षित स्टाम्प पेपर पर अंकित नहीं हो जाती या भ्रामक है एवं अनुरक्षणीय नही है।

26. ***सि.प्र.सं. के आदेश 41 नियम 1*** का संदर्भ देना भी उचित है। मूल प्रावधान में यह प्रावधान था कि अपील केवल "डिक्री" के विरुद्ध ही की जा सकती है, हालांकि, "डिक्री" शब्द को सिविल प्रक्रिया (संशोधन) अधिनियम, 1999

अधिनियम 46/1999, दिनांक 01.07.2002 के संशोधन के माध्यम से "निर्णय" शब्द द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है। यह संशोधन इस निष्कर्ष को और पुष्ट करता है कि अपील दायर करने के उद्देश्य से डिक्री का आहरण आवश्यक नहीं है क्योंकि निर्णय के अंतिम पैराग्राफ को डिक्री के रूप में समझा जाना चाहिए, जो एक बार उद्घोषित किये गये निर्णय की अंतिमता को दर्शाता है। इसलिए, अपेक्षित स्टाम्प पेपर पर अंतिम डिक्री का न होना अब अपील को प्राथमिकता देने हेतु पूर्व-आवश्यक नहीं है। उसी तर्क से, एक बार निर्णय अंतिम हो जाने के बाद, डिक्री का आहरण अब इसके निष्पादन हेतु पूर्व-आवश्यक नहीं है, हालांकि यह तब तक लागू नहीं होगा जब तक कि इसे अपेक्षित स्टाम्प पेपर पर न लिखा जाए।

27. उपर्युक्त चर्चा के आलोक में, प्रतिवादी सं. 1/निर्णय ऋणी सं. 1/प्रति-दावेदार [*सूरजदेव दुबे व अन्य* (पूर्वोक्त); *एस. नारायण रेड्डी व अन्य* (पूर्वोक्त); *धर्मराज वेल्लालर* (सुप्रा);] की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा जिन निर्णयों पर भरोसा किया गया, जिनमें यह पाय गया कि अंतिम डिक्री केवल अपेक्षित स्टाम्प पेपर पर अंकित होने पर ही निष्पादन योग्य हो जाती है, वे केवल आग्रही मूल्य के हैं तथा उपरोक्त चर्चित निर्णयों में सर्वोच्च न्यायालय के स्पष्ट आदेश के मद्देनजर लागू नहीं होते हैं।

28. अब वर्तमान मामले में दावों को ध्यान देते हुए, *प्रतिवादी सं. 1, श्रीमती कौशल्या गर्ग* की मृत्यु दिनांक 23.04.2021 को हुई, अर्थात् अंतिम डिक्री के

बाद एवं उन्होंने दिनांक 20.09.2016 की एक वसीयत छोड़ी है, जिसके तहत उन्होंने प्रतिवादी सं. 1 के पक्षकार में अपना हिस्सा वसीयत में दिया है। वसीयत की वैधता को एक अलग वाद के माध्यम से स्थापित किया जाना चाहिए तथा इसके लिए न केवल उसके अन्य विधिक वारिसों को पक्षकार बनाने की आवश्यकता हो सकती है, बल्कि बाद की घटनाओं एवं वसीयत के आधार पर उसके हिस्से के संबंध में नए सिरे से निर्णय लेने की भी आवश्यकता हो सकती है। यह कार्रवाई का एक नया वाद हेतुक है जिसे अतीत में हुई घटनाओं में स्थानांतरित नहीं किया जा सकता है तथा अंतिम डिक्री के माध्यम से ठोस रूप दिया गया है। इसे अन्यथा व्याख्या करने से विभाजन के वाद में कोई अंतिमता नहीं होने की बेतुकी बात सामने आएगी, जहां अंतिम डिक्री पारित होने के बाद, शेयर पक्षकारों के निधन पर हस्तांतरित होते रहेंगे।

29. इसी तरह, उपरोक्त चर्चित कारणों से, प्रतिवादी सं. 5 की बाद में हुई मृत्यु दिनांक 18.10.2019 के अंतिम डिक्री को पुनः खोलने की अनुमति नहीं दे सकती है, जो पहले ही अंतिम रूप प्राप्त कर चुकी है।

30. अतः प्रतिवादीगण का आवेदन विधिक दृष्टि से मान्य नहीं है, अतः इसे खारिज किया जाता है।

(नीना बंसल कृष्णा)
न्यायाधीश

02 मार्च, 2024
एस.शर्मा/आरएस

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा/ समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*